इकाई 12 बी.आर. अम्बेडकर

इकाई की रूपरेखा

12.1 प्रस्तावना

12.2 जीवन परिचय

12.2.1 उनकी रचनाएँ

12.3 डॉ. अम्बेडकर का चिंतन और विचार

12.3.1 वैचारिक दृष्टिकोण

12.3.2 विवेक और अधिकार

12.3.3 धर्म

12.3.4 जाति

12.3.5 छूआछूत

12.3.6 संवैधानिक लोकतंत्र

12.4 सामाजिक न्याय और सहायक राज्यव्यवस्था

12.5 सारांश

12.6 अभ्यास प्रश्न

12.1 प्रस्तावना

बाबा साहेब अम्बेडकर आधुनिक भारत के प्रमुख चिंतकों में से एक हैं। उनका चिंतन मुख्य रूप से स्वैतंत्रता, मानव समानता, लोकतंत्र और सामाजिक-राजनीतिक मुक्ति (स्वाधीनता) के मुद्दों से जुड़ा है। वह विश्व के अदभुत् चिंतक हैं जिन्होंने बचपन से ही अत्यंत अपमान, गरीबी और सामाजिक कलंक सहा परन्तु फिर भी महान शैक्षिक और दार्शनिक ऊँचाइयों को छुआ। वह एक क्रान्तिकारी समाज सुधारक थे जिन्होंने लोकतंत्र में अत्यंत विश्वास और समाज का नैतिक आधार प्रदर्शित किया। वे मोहनदास करमचन्द गांधी द्वारा संचालित भारत के राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रमुख आलोचकों में से एक थे। उन्होंने भारत में नागरिक और राजनीतिक संस्थाओं का निर्माण किया और उन विचारधाराओं और संस्थाओं की आलोचना की जिन्होंने लोगों को नीचा दिखाया और दास बनाया। उन्होंने कठोरता और प्रतिक्रिया के साथ अर्थव्यवस्था, सामाजिक संरचनाओं और संस्थाओं, विधि और संविधानवाद (constitutionalism), इतिहास तथा धर्म पर अनेक प्रमुख अध्ययन किए। वे भारतीय संविधान की प्रारूप समिति (Drafting Committee) के अध्यक्ष थे और विवेकपूर्वक स्पष्टता के साथ इसके प्रमुख प्रावधानों का समर्थन किया तथा इसके द्वारा समर्थन किए गए आदर्शों की उपेक्षा किए बिना तर्कों पर अडिग रहे। उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया था और आधुनिक और सामाजिक रूप से उद्धारपूर्ण आग्रहों (emancipatory urges) का प्रत्युत्तर देने के लिए अपने हजारों अनुयायियों के साथ इसे नया रूप दिया और आधुनिक भारत में इसके पुनर्जीवन के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

12.2 जीवन परिचय

बाबा साहेब अम्बेडकर (1891-1956) का जन्म 14 अप्रैल, 1891 को महाराष्ट्र में अछूत महार जाति में हुआ था। उन्होंने बाल्यावस्था और उसके बाद के अपने जीवन में छूआछूत के कारण सभी प्रकार

का सामाजिक अपमान सहा। कक्षा में उन्हें शेष विद्यार्थियों के साथ बैठने नहीं दिया जाता था। विद्यालय में उन्हें अपने हाथों से पानी पीना पड़ता था और ऊँची जाति के सदस्य ऊपर से पानी डालते थे। संस्कृत सीखना उनके लिए मना था। इन सभी बाधाओं के बावजूद, उन्होंने मुंबई विश्वविद्यालय से अपनी स्नातक की शिक्षा पूरी की और संयुक्त राज्य अमेरिका में कोलंबिया विश्वविद्यालय से अपनी स्नातकोत्तर और पीएच.डी. पूरी करने चले गए। वे अमेरिका और यूरोप में उदार और उग्र विचारधाराओं, विशेषकर फ्रांसिसी क्रान्ति के बाद उभरी विचारधारा से प्रभावित हुए। अमेरिका में जातीय भेदभाव के विरुद्ध संघर्षों ने भारत में जाति-आधारित उत्पीड़न से लड़ने के उनके संकल्प में सहायता की। वे भारत में विद्यमान अस्पृश्यता (छूआछूत) और जाति व्यवस्था से बहुत गहरे जुड़ गए। साथ ही साथ, उन्होंने भारत की अर्थव्यवस्था, राजनीति और सामाजिक जीवन पर पड़ने वाले उपनिवेशवाद के प्रभाव की जाँच पड़ताल की।

ईस्ट इंडिया कंपनी के प्रशासन और वित्त (Administration and Finance of East India ***Company)*** के उनके एम. ए. के शोधनिबंध और कोलंबिया विश्वविद्यालय में *ब्रिटिश भारत में प्रान्तीय वित्त का विकास (The Evolution of the Provincial Finance in British India)* और *रूपए की समस्या - इसका उद्गम और इसका समाधान (The Problem of the Rupee – Its Origin and its Solution.)* पर डी.एससी. शोध निबंध औपनिवेशिक अर्थव्यवस्था और राजनीति तथा उपनिवेश-विरोधी आर्थिक चिंतन के प्रति उनका उत्कृष्ट योगदान था।

कोलंबिया विश्वविद्यालय में अपनी पीएच.डी. उपाधि पूरी करने के बाद, वें बड़ौदा महाराजा के प्रशासन की सेवा करने के लिए वापस आ गए जिन्होंने उन्हें अमेरिका में शिक्षा के लिए भेजा था। परन्तु विशिष्ट योग्यताओं के बाद भी, उन्हें बड़ौदा प्रशासन में अस्पृश्यता का दर्द झेलना पड़ा। उन्होंने अपनी नौकरी छोड़ दी और कुछ समय के लिए वे सिडेनहम कालेज ऑफ कामर्स एण्ड इकानामिक्स, में राजनीतिक अर्थव्यवस्था के प्रोफेसर हो गए। उन्हान 1919 के मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों से पहले साउथबोरो समिति के समक्ष अभिवेदन (representation) किया और दलित वर्गों (depressed classes) जिन्हें उस समय अस्पृश्य और निम्न जातियाँ समझा जाता था, के लिए अलग प्रतिनिधित्व का समर्थन किया। उन्होंने जनवरी, 1920 में मराठी में एक पाक्षिक (fortnightly) *मूकनायक* आरंभ किया और कोल्हापुर के शाहू महाराज की अध्यक्षता में उस वर्ष हुए प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन में अग्रणी भूमिका निभाई। अपनी डी.एससी. की उपाधि पूरी करने के लिए उन्होंने लंदन स्कूल ऑफ इकोनामिक्स में प्रवेश लिया जिसे उन्होंने 1922 में पूरा कर लिया और उन्हें उसी वर्ष ग्रेज़ इन (Grey's Inn) में 1923 में मुंबई में अपनी कानूनी प्रैक्टिस आरंभ की और अछूतों को एकत्र करने और उन्हें संगठित करने में सक्रिय भूमिका निभाई। उन्होंने 1924 में बहिष्कृत हितकारिणी सभा (Depressed Classes Welfare Association) बनाई। 1927 में वे मुंबई विधानपरिषद् में मनोनीत हो गए। उन्होंने महाद में चोवदार तालाब में प्रसिद्ध सत्याग्रह का नेतृत्व किया और पानी के उस साझा तालाब से अछूतों के लिए अधिकारों की माँग की जिससे उन्हें रोका जाता था। परिणामस्वरूप *मनुस्मृति* को भी जलाया गया। उन्होंने मराठी में पाक्षिक पत्रिका *बहिष्कृत भारत* आरंभ किया और 1927 में दो संगठनों 'समाज समता संघ' और 'समता सैनिक' की स्थापना की जिसके माध्यम से दलित वर्ग के लिए समानता की माँग दोहराई। 1928 में दलित वर्ग शिक्षा समिति (Depressed Class Education society), मुम्बई की स्थापना की। उसी वर्ष पाक्षिक पत्रिका *समता* को भी प्रकाशित किया गया। इन वर्षों में डॉ. अम्बेडकर कानून के प्रोफेसर के तौर पर सक्रिय रहे। वे साइमन कमीशन के समक्ष अपना प्रतिनिधिमंडल लेकर गए तथा भारत में संवैधानिक सुधारों के मुद्दे की जाँच की माँग की।
1930 में कलराम मंदिर, नासिक में सत्याग्रह का नेतृत्व किया और अछूतों के लिए मंदिर में प्रवेश की माँग की। उन्होंने 1930 में नागपुर में आयोजित प्रथम अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस की अध्यक्षता की।

डॉ. अम्बेडकर के स्वसहायता और अछूतोद्धार के कार्य, आधुनिक भारत के आधुनिक दृष्टिकोण, अधिकारों, लोकतंत्र और प्रतिनिधित्व पर उनके विचारों ने उन्हें भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस और मोहनदास करमचंद गांधी के विरुद्ध निर्विवाद नेता के रूप में मुकाबले पर ला खड़ा किया। यह विरोध 1931 में गोल मेज सम्मेलन में उग्र रूप से दिखाई दिया जिसमें डॉ. अम्बेडकर ने दलित वर्गों के लिए पृथक् निर्वाचन मंडल की माँग की जिसका महात्मा गांधी ने कांग्रेस के एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में तीव्र विरोध किया। महात्मा गांधी ने 1932 के सांप्रदायिक पंचाट (communal *award)* के विरुद्ध आमरण अनशन किया क्योंकि इस पंचाट ने अछूतों को पृथक् निर्वाचन मंडल प्रदान किया था। डॉ. अम्बेडकर ने दलित वर्गों की ओर से बातचीत की और पुणे समझौते पर हस्ताक्षर किए जिसमें दलित वर्गों के आरक्षण सहित संयुक्त निर्वाचन मंडल के लिए सहमति व्यक्त की गई थी। इसके बाद महात्मा गांधी ने अनशन वापस ले लिया।

1936 में डॉ. अम्बेडकर ने स्वतंत्र लेबर पार्टी की स्थापना की जिसने मुंबई प्रान्त में 1937 के चुनावों में 17 सीटों पर मुकाबला किया और उनमें से 15 सीटें जीतीं। द्वितीय विश्व युद्ध और मुस्लिम लीग द्वारा पाकिस्तान की माँग ने राष्ट्रीय आन्दोलन में नए और जटिल मुद्दों को प्रस्तुत किया। डॉ. अम्बेडकर ने 1942 में एक अलग पार्टी अनुसूचित जाति परिसंघ *(ScheduledCaste Federation)* स्थापित कर ली और वे उसी वर्ष पाँच वर्ष की अवधि के लिए वायसराय काउंसिल के सदस्य नियुक्त हो गए।

अम्बेडकर को बंगाल से संविधान सभा के लिए चुन लिया गया और उन्होंने कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ संयुक्त भारत के लिए आग्रह किया। उन्हें भारतीय संविधान की प्रारूप समिति का अध्यक्ष नियुक्त किया गया तथा वे अगस्त 1947 में नेहरू मंत्रिमंडल में विधि मंत्री हो गए। इन दोनों क्षमताओं में उन्होंने भारत में सार्वजनिक जीवन के लिए एक स्वतंत्र और समतावादी ढाँचे के विषय में विचार किया, उसका निर्माण किया और उसकी रक्षा की तथा भारत में सुविधावंचित लोगों के लिए व्यापक सुरक्षा उपायों तथा धार्मिक अल्पसंख्यकों और भाषायी एवं सांस्कृतिक समूहों के लिए स्वायत्तता चाही।

अम्बेडकर ने 1951 में नेहरू मंत्रिमंडल से त्यागपत्र दे दिया और भारत में सामाजिक तथा आर्थिक लोकतंत्र की कमी और उसके अभाव में कारगर ढंग से कार्य करने के लिए संवैधानिक लोकतंत्र की अक्षमता के विकल्प तैयार करने का प्रयास किया। परिणामस्वरूप, इस खोज के कारण उन्होंने बौद्ध धर्म अपना लिया और भारतीय रिपब्लिकन पार्टी की स्थापना का प्रस्ताव किया। 6 दिसम्बर, 1956 को उनका देहांत हो गया और वे करोड़ों लोगों को बिलखता छोड़कर चले गए। वह अपने पीछे जटिल वैचारिक ढाँचा छोड़ गए जो उनकी अनेक रचनाओं और भाषणों में मौजूद है तथा उनके सार्वजनिक जीवन में उनके नागरिक और राजनीतिक जीवन का सूचक रहा है तथा आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पुनर्निर्माण के लिए बौद्धिक कार्य सूची में स्पष्ट दिखाई देता है।

12.2.1 उनकी रचनाएँ (His Writings)

डॉ. अम्बेडकर ने अनेक पुस्तकें लिखीं। अपने समकालीनों के विपरीत, उन्होंने अपनी पुस्तकों पर अनेक मूल शोध किए। प्रारूप समिति के अध्यक्ष के रूप में भारतीय संविधान लिखने और संविधान सभा की लंबी चर्चाओं में इसका समर्थन करने के अतिरिक्त उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं जो व्यवस्थित चिंतन दर्शाती हैं। *रुपए की समस्या [(ThProblem of the Rupee)*(1923)] और *ब्रिटिश भारत में प्रान्तीय वित्त का अभ्युदय [(TheEvolution of Provincial Finance in British India)*, (1925)] पर अपने शोध प्रबंधों के अतिरिक्त, उन्होंने *जाति उन्मूलन [(Annihilationof Caste)* (1936)], *पाकिस्तान पर विचार [(Thoughton Pakistan)*, (1940)], *कांग्रेस और गांधी ने अछूतों के लिए क्या किया है [(WhatCongress and Gandhi have done to the Untouchables)* (1948)], *अछूतः वे कौन थे और वे अछूत क्यों बने [(TheUntouchables: Who were they and why they became Untouch-*

ables), (1948)], *राज्य और अल्पसंख्यक* [(*States and Minorities)* (1947)], *भाषायी राज्यों पर विचार* [(*Thoughts on Linguistic States)* (1955)], और उनकी महान कृति *बुद्ध और उनका धम्म [(TheBuddha and His Dhamma)* (1957)] सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। इनके अलावा, उन्होंने अनेक लेख लिखे, विद्वतापूर्ण ज्ञापन प्रस्तुत किए, व्याख्यान दिए और अपने द्वारा प्रकाशित पत्र-पत्रिकाओं में विभिन्न मुद्दों पर टिप्पणियाँ प्रस्तुत कीं।

12.3 डॉ. अम्बेडकर का चिंतन और विचार

डॉ. अम्बेडकर के चिंतन में अनेक आयाम हैं। ऐसे बहुत ही कम मुद्दें हैं जो उनसे अछूते रह गए हों। उन्होंने कई महत्वपूर्ण विषयों पर अपना मत प्रस्तुत किया जो उनके समय के भारत सामना कर रहा था। उनकी बहुमुखी प्रतिभा उनके सामाजिक और राजनीतिक चिंतन, आर्थिक विचारों, कानून और संविधानवाद में परिलक्षित होती है।

12.3.1 वैचारिक दृष्टिकोण (Ideological orientation)

डॉ. अम्बेडकर ने स्थिति के अनुसार उदारवादियों, मार्क्सवादियों और अन्य लोगों से सीमांकन (demarcation) के संदर्भ के आधार पर अपने आपको 'प्रगतिशील अतिवादी' और कभी-कभी 'प्रगतिशील रूढ़िवादी' कहा है। वे स्वतंत्रता के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने स्वतंत्रता को सकारात्मक शक्ति और क्षमता के रूप में देखा तथा लोगों को आर्थिक प्रक्रियाओं और शोषण, सामाजिक संस्थाओं और धार्मिक रूढ़िवादिता तथा भय और पूर्वाग्रहों द्वारा प्रतिबन्धित हुए बिना उन्हें अपनी पसन्द चुनने के योग्य बनाया। उनका मानना था कि उदारवाद स्वतंत्रता की संकुचित अवधारणा का समर्थन करता है जिसने कुछ ही लोगों के हाथों में बड़ी मात्रा में संसाधन दे दिए हैं और इस कारण वंचना (deprivation) और शोषण उत्पन्न किया है। उनका मानना था कि उदारवाद सामाजिक और राजनीतिक संस्थाओं के बारे में असंवेदनशील है जो औपचारिक समानता को प्रोत्साहित करते हुए आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक क्षेत्रों में व्यापक असमानताओं को बढ़ाता है। उनका तर्क था कि उदार व्यवस्थाओं में अल्पसंख्यकों की गहन असमानताएँ छिपी हुई हैं जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में कालों की दशाएँ और यूरोप में यहूदियों की दशाएँ। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि उदारवाद प्रायः औपनिवेशिक शोषण और व्यापक अन्याय को उचित ठहराने के लिए है। व्यक्ति पर उदार प्रभाव (दबाव) ने समुदाय के बंधनों की उपेक्षा की और विचारशील और रचनात्मक छवि को बनाए रखने के लिए समुदाय की आवश्यकता की भी उपेक्षा की। इसके अतिरिक्त, उदारवाद ने शोषणकारी और प्रभावशाली संरचनाओं (ढाँचों) से उत्पन्न व्यक्ति के दमन और अलगाव की भी उपेक्षा की। उन्होंने पाया कि उदारवाद को राज्य और उन उपायों के बारे में बहुत कम समझ है जिन्हें राज्य को बेहतर जीवन देने और उसे प्रोत्साहित करने के लिए बहुत जरूरी अपनाया जाना चाहिए। उन्होंने महसूस किया कि विधि के समक्ष समानता का सिद्धान्त असमतावादी व्यवस्थाओं के मुकाबले वास्तव में एक बड़ा कदम है और इसने असमतावादी व्यवस्थाओं को उखाड़ फेंकने का प्रयास किया है परन्तु यह पर्याप्त नहीं है। उन्होंने शक्तिशाली विचारों जैसे विचार (निर्णय) की समानता (equality of consideration), प्रतिष्ठा की समानता और गरिमा की समानता का भी समर्थन किया। वे प्रतिष्ठा की धारणा (notion) के प्रति संवेदनशील थे और उनकी दृष्टि में समुदाय की धारणा ही प्रमुख थी।

अम्बेडकर ने कुछ ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों का पता लगाया जिन पर वे मार्क्सवाद से सहमत थे। उनका तर्क था कि दर्शनशास्त्र का कार्य विश्व को बदलना है जैसा कि मार्क्स ने अपने शोध प्रबंधों *फ्यूरबैक (Feurbach)* में कहा था और उन्होंने (अम्बेडकर) इसी प्रकार की माँग करके बुद्ध के मुख्य संदेश में देखा कि विभिन्न वर्गों के बीच संघर्ष होता है और वर्ग संघर्ष सामाजिक संबंधों को व्यापक रूप से

प्रभावित करता है। उनका तर्क था कि एक अच्छा समाज अपने पूर्ण विकास के उत्पादन के साधनों के विस्तृत सार्वजनिक स्वामित्व और प्रत्येक व्यक्ति के लिए समान अवसर की माँग करता है ताकि व्यक्ति अपना पूर्ण विकास कर सके। परन्तु उन्होंने इसके लिए समाजवाद के लिए काम कर रही मानव एजेंसी के हस्तक्षेप के बिना समाजवाद की अपरिहार्यता (inevitability) को अस्वीकार कर दिया और कहा कि राजनीतिक और वैचारिक संस्थाओं द्वारा निभाई जाने वाली महत्वपूर्ण भूमिका को इतिहास की आर्थिक व्याख्या और राज्य को शिथिल करने वाली अवधारणा स्वीकार नहीं करती। उन्होंने सत्ता पर नियंत्रण करने के लिए एक साधन के रूप में हिंसा की रणनीति का समर्थन किया और अच्छा समाज बनाने के लिए दृढ़ जन कार्रवाई का आह्वान किया। उन्होंने संघर्ष आरंभ करने वाले लोगों और सामाजिक संबंधों में परिवर्तन लाने में संघर्षों के रूपांतरकारी प्रभाव को रेखांकित किया। उनका यह भी मानना था कि एक नैतिक क्षेत्र को स्वीकार करके ही एक वांछनीय राजनीतिक व्यवस्था सृजित की जा सकती है जिसे उन्होंने स्पष्ट रूप से बुद्ध की शिक्षाओं में देखा।

वे ब्राह्मणवादी विचारधारा के कड़े आलोचक थे जिसे वे समझते थे कि यह भारत में प्रभावशाली वैचारिक अभिव्यक्ति रही है। उनका तर्क था कि यह बुद्ध द्वारा शुरू की गई क्रान्ति (आन्दोलन) को हराकर अपनी समस्त तीव्रता के साथ पराजित कर पुनः स्थापित हुई। इसने सामाजिक संस्थाओं और संबंधों की व्यवस्था करने में श्रेणीबद्ध असमानता (graded inequality) के सिद्धान्त का समर्थन किया; योग्यता के सिद्धान्त की अपेक्षा जन्म के सिद्धान्त को प्रोत्साहित किया; विवेक (बुद्धि) की उपेक्षा की और कर्मकांड तथा पुरोहिती का समर्थन किया। इसने शूद्रों तथा अछूतों को निरंतर निम्न कार्यों (दासता) और अपयश की ओर धकेला है। इसने असमानता और संसाधनों और पदों के असमान वितरण का समर्थन किया तथा *कर्म सिद्धान्त* जैसे नियमों के प्रति अपील द्वारा ऐसे उपायों को धार्मिक स्वीकृति प्रदान की। इसने शारीरिक श्रम की अपेक्षा मानसिक श्रम की श्रेष्ठता के सिद्धान्त को माना। इसे निम्न श्रेणियों और अलग थलग किए गए वर्गों के प्रति बिल्कुल भी सहानुभूति नहीं है। इसने करोड़ों लोगों को निम्न दशा में सभ्यता से दूर छोड़ दिया था और उनकी निम्न दशाओं का समर्थन किया था। इस व्यवस्था में स्वतंत्रता और पसंद के लिए कोई स्थान नहीं था। इसने समाज को अनेक बंद समूहों में विभाजित कर दिया था जिससे वे श्रेणियाँ समाप्त करने में, समुदाय की भावना विकसित करने और साझे प्रयासों को प्रोत्साहित करने में असमर्थ थे। इसने संयुक्त जीवन से सुख और दुख छीन लिए, संघर्षों और प्रयासों को कमजोर कर दिया, सुखों (sensuousness) और आमोद-प्रमोद को दुर्बल बना दिया ब्राह्मणवाद किसी भी प्रकार के नैतिक मूल्यों और उन मूल्यों पर आधारित दृष्टिकोणों से वंचित था।

अम्बेडकर गांधी और गांधीवाद के कटु आलोचक थे। उन्होंने छूआछूत के उन्मूलन के प्रति गांधी के दृष्टिकोण पर प्रहार किया क्योंकि इस दृष्टिकोण ने शास्त्रों में छूआछूत के प्रतिबंध को मना किया और सवर्ण हिन्दुओं को इसे स्वेच्छा से छोड़ने का आह्वान किया तथा इसके लिए सुधार करने के लिए कहा। अम्बेडकर ने अनुभव किया कि अधिकार और मानवता को उन लोगों की दया और पूर्वग्रह (prejudices) पर नहीं छोड़ा जा सकता जिन्होंने कम आकलन करने में निहित स्वार्थ विकसित किया है। उन्होंने गांधी की तरह जाति-व्यवस्था का सीमांकन नहीं किया, बल्कि श्रेणीबद्ध असमानता को एक ही सिद्धान्त के रूप में देखा। यदि गांधी के आग्रह से छूआछूत समाप्त हो जाती है, जिसे अम्बेडकर असंभव समझते थे, तो भी अछूत शूद्रों के स्तर के रूप में समाज के सबसे निचले पायदान पर ही रहेंगे। उन्होंने गांधी को न केवल हिन्दू रूढ़िवादिता के प्रति समर्पण करते देखा बल्कि नए सिरे से इस रूढ़िवादिता का पुनर्निर्माण करते भी देखा। गांधी अछूतों को नैतिक नीरसता प्रदान कर रहे थे और दया के साथ उन्हें खरीदने का प्रयास कर रहे थे जबकि दूसरों को वे बिना किसी रुकावट के उनके हितों को प्रोत्साहित करने दे रहे थे। अम्बेडकर ने गांधी द्वारा अछूतों को दिया गया 'हरिजन' नाम अस्वीकार कर दिया और इससे घृणा की।

अम्बेडकर ने गांधी द्वारा प्रचारित कई मुख्य धारणाओं जैसे स्वराज, अहिंसा, विकेन्द्रीकरण (decentralisation), ट्रस्टीशिप, खादा और शाकाहार को अस्वाकार कर दिया। उन्हान आधुनिक अर्थव्यवस्था के साथ आधुनिक राज्यव्यवस्था का समर्थन किया। उनके एजेंडे के लिए ये सांसारिक सरोकार (worldly concerns) अन्य सांसारिक खोज से अधिक महत्वपूर्ण थे। उन्होंने महसूस किया कि पंचायतीराज के प्रति बेबाक दृष्टिकोण से प्रभावशाली वर्गों को अतिरिक्त संसाधन प्रदान करने से गाँव में ये वर्ग और मज़बूत हो जाएँगे और उन्हें उनसे नीचे के सामाजिक वर्गों और समूहों का शोषण करने की वैधता मिल जाएगी।

12.3.2 विवेक और अधिकार

अम्बेडकर ने आधुनिक युग को मानव विवेक के मिथकों, रीति-रिवाजों और अंधविश्वासों पर मानव विवेक की विजय की दृष्टि से देखा। उनका तर्क था कि विश्व और मानव को मानव के विवेक और प्रयास (तर्क) से स्पष्ट किया जा सकता है। अलौलिक शक्तियों (supernatural powers) को अपने उद्देश्य के लिए बुलाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। वास्तव में अलौलिक शक्तियाँ स्वयं कमज़ोर मानव क्षमताएँ और मानव विकास की अल्पविकसित अवस्था को व्यक्त करती हैं। अतः उन्होंने कहा कि मानव विवेक की अभिव्यक्ति सकारात्मक रूप से विज्ञान और आधुनिक प्रौद्योगिकी में निहित है।

यदि उनके बारे में समस्याएँ हैं तो वही विवेक आवश्यक सुधार करने में सक्षम है।
उन्हान ज्ञान को मामासात्मक (speculative) और गोपनीय मानने का बजाए अत्यंत व्यावहारिक समझा। उन्होंने महसूस किया कि व्यावहारिक रूप से सक्रिय भागीदारी से अलग हुआ मीमांसात्मक ज्ञान पुरोहिती और निराधार कल्पना को जन्म देता है।

धर्म के प्रति अम्बेडकर का दृष्टिकोण मिश्रित रहा। उन्होंने व्यक्तिगत ईश्वर में विश्वास का समर्थन नहीं किया। उनका मानना था कि धर्म नश्वरता की भांति समाजों को स्थायी आधार प्रदान करता है और श्रेष्ठ जीवन का सामूहिक कार्य करने के योग्य बनाता है। इस प्रकार का धर्म लक्ष्यों को ऊपर उठाता है, परोपकार और दूसरों के लिए सरोकार को बढ़ावा देता है तथा उन्हें एकता में बाँधता है। यह लोगों का ध्यान रखने के साथ-साथ उन्हें प्रोत्साहित करता है तथा व्यक्ति शोषण, अन्याय और अनुचित कार्यों के विरुद्ध संघर्ष करता है।

उन्होंने कहा कि श्रेष्ठ जीवन के लिए स्वतंत्रता, समानता और बंधुता अनिवार्य हैं और उनके लिए पृथक् अधिकारों की सत्ता की रचना किए जाने की जरूरत है। उन्होंने अधिकारों को उदार व्यक्तिवाद (liberal individualism) की केवल संकुचित सीमाओं में ही नहीं समझा बल्कि एक व्यक्ति और सामूहिक अधिकारों (group rights) के तौर पर भी समझा। उन्होंने संविधान सभा की बहसों में दोनों प्रकार के अधिकारों का समर्थन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने नागरिक और राजनीतिक अधिकारों तथा सामाजिक एवं आर्थिक अधिकारों के लिए भी तर्क प्रस्तुत किया। उन्होंने इन अधिकारों को विरोध के रूप में नहीं देखा बल्कि एक-दूसरे को मज़बूत करने के रूप में देखा। यदि अधिकारों के बीच कोई द्वंद्व है तो उन पर नागरिक और राजनीतिक मंचों (forums) के माध्यम से चर्चा की जानी चाहिए। उन्होंने अल्पसंख्यकों और सांस्कृतिक समूहों के अधिकारों का भी समर्थन किया ताकि वे अपने-अपने विश्वासों और पहचान को बनाए रख सकें, साथ ही सार्वजनिक मामलों में अपना न्यायपूर्ण स्थान प्राप्त करने के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ प्रदान हो सकें। उन्होंने समानता के कारणों से न केवल सुविधावंचित समुदायों को विशेष व्यवहार बल्कि असमतावादी सामाजिक संरचनाओं (egalitarian social structures) के आधार पर और स्वस्थ और श्रेष्ठ समाज के लक्ष्य प्राप्त करने के लिए इन्हें उपलब्ध कराने का समर्थन किया।

12.3.3 धर्म

अम्बेडकर ने विश्व के प्रमुख धर्मों, विशेषकर हिन्दू धर्म, इस्लाम धर्म, ईसाई धर्म और बौद्ध धर्म का विस्तृत रूप से उल्लेख किया है। उन्होंने हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म पर बहुत कुछ लिखा। धार्मिक विकास का मुख्य मार्ग जिसका पता उन्होंने प्राचीन भारत के बारे में लगाया, वह यह था कि वैदिक समाज का पतन हो गया और यह आर्य समाज में बदल गया; बौद्ध धर्म का उदय और इसके द्वारा हुए, सामाजिक और नैतिक रूपांतरण (moral transformation) एवं राजनीतिक अभिव्यक्ति को प्राप्त हुआ।

उन्होंने पाया कि हिन्दू धर्म ग्रंथ एकीकृत (unified) और संयुक्त सूझबूझ (ज्ञान) के अनुकूल नहीं हैं। वे विभिन्न मतों (sects) और प्रवृत्तियों (tendencies) में कठोर मतभेदों को प्रतिबंधित करते हैं। वैदिक साहित्य में भी मतभेद हैं; उपनिषद् चिंतन का प्रायः वैदिक चिंतन के साथ सामंजस्य नहीं है; स्मृति साहित्य का श्रुति साहित्य के साथ विवाद है; देवता एक-दूसरे के विरुद्ध हैं और तंत्र का मतभेद स्मृति साहित्य के साथ है। हिन्दू धर्म के अवतार राम और कृष्ण को अनुकरणीय उदाहरण नहीं माना जा सकता। उन्होंने भगवद्गीता के बारे में कहा कि इसने बौद्ध धर्म के उदय के कारण ब्राह्मणवाद को बचाने के लिए प्रमुख रूप से तर्क प्रस्तुत किए और धार्मिक कर्मकांडों और धार्मिक रीति-रिवाजों के प्रति आग्रहों द्वारा यह स्वयं को बचाने में असफल रहा।

अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म की नई व्याख्या विकसित की और इसे सामाजिक रूप से संलिप्त देखा। इसने गरीबों और शोषितों को सुविधा दी और यह संसार के सुख-दुखों से जुड़ा हुआ है। यह ईश्वर के अस्तित्व अथवा आत्मा की अमरता को नहीं मानता। यह विवेक और तर्क को उचित मानता है तथा इस संसार के अस्तित्व का समर्थन करता है, नैतिक व्यवस्था को उचित ठहराता है तथा विज्ञान का समर्थन करता है। उन्होंने स्वतंत्रता, समानता और समुदाय को बौद्ध धर्म की शिक्षाओं के लिए प्रमुख माना।

अम्बेडकर ने ईसाई धर्म और इस्लाम की धर्मवैज्ञानिक (theological) और समाज वैज्ञानिक आलोचना की। दोनों अनुभवातीत प्रभुत्व (transcendental domain) का समर्थन करते हैं, मानव विवेक का अपमान करने के अतिरिक्त निरंकुश और पितृसत्तात्मक प्रवृत्तियाँ (paternal tendencies) पैदा करते हैं। वास्तव में ये मानव विवेक जाँच-परख में फंस गए जिन्हें उन्होंने आरंभ में सजातीय विवाह के लिए अभिन्न माना। उन्होंने यह भी पाया कि जाति का नाम जाति की निरंतर पुनः उत्पत्ति के लिए जरूरी है। उन्होंने तर्क दिया कि अलग पहचान के रूप में जातियों को श्रेणीबद्ध असमानता के सिद्धान्त पर आधारित जाति व्यवस्था से अलग करना होगा। इस व्यवस्था के शिखर पर ब्राह्मण हैं। उन्होंने यह भी तर्क दिया कि श्रेणीबद्ध असमानता के आधार पर वर्गीकरण (ranking) व्यवस्था के स्थायित्व को बचाता है और उसकी निरंतर पुनः उत्पत्ति को सुनिश्चित करता है जबकि साधारण असमानता इसकी अनुमति नहीं देती। विरोधी सदस्यों को सम्मान और घृणा के सोपानक्रम (hierarchy) में अन्य श्रेणी के रूप में समायोजित कर लिया जाता है जोकि जाति व्यवस्था की स्वतंत्रता और लोगों की समानता में बाधा पहुँचाते हैं। ईसाइयों का यह विश्वास कि जीसस (ईसा मसीह) ईश्वर का पुत्र है, विवेक का विरोध करता है। अम्बेडकर ने महसूस किया कि इन दोनों धर्मों ने श्रेणीबद्ध असमानता के लिए बहुत सीमा तक अपने आपको ढाल लिया है। इन दोनों धर्मों के नियमों ने इनके अनुयायियों को प्रायः बल और हिंसा अपनाने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने बुद्ध को इन दोनों धर्मों के समर्थकों के विरुद्ध खड़ा पाया।

12.3.4 जाति

जाति और जाति व्यवस्था के बारे में अम्बेडकर की जानकारी में समय-समय पर कुछ महत्वपूर्ण

परिवर्तन होते रहे। आरंभ में, उन्होंने जाति की विशेषताओं को मिश्रित सांस्कृतिक वातावरण में विजातीयता (exogamy) पर थोपी गई सजातीयता (endogamy) माना। उन्होंने महसूस किया कि सती, बाल विवाह प्रथाएँ और विधवा विवाह प्रतिषेध जैसी बुराइयाँ इसके अपरिहार्य परिणाम थे। एक बार किसी जाति की अपनी सीमाएँ बंद हो गईं तो अन्य जातियों ने भी उसका अनुसरण किया। ब्राह्मणों के सामाजिक रूप से संकीर्ण होने से सर्वप्रथम जातियाँ उत्पन्न हुईं। अम्बेडकर जाति की सजातीय विशेषता पर बल देते रहे परन्तु अन्य विशेषताओं जैसे श्रम-विभाजन (division of labour), साथ-साथ खाना-पीना और जन्म के सिद्धान्त की अनुपस्थिति जैसी अन्य विशेषताओं का अधिक उल्लेख नहीं किया। अम्बेडकर का मानना था कि जाति हिन्दू धर्म की अनिवार्य विशेषता है। कुछ सुधारकों ने इसे छोड़ दिया हो परन्तु जाति संहिता को तोड़ना बहुत बड़ी संख्या के लिए गहरे जकड़े विश्वासों का स्पष्ट उल्लंघन है। वर्ण-व्यवस्था और जाति व्यवस्था को नियंत्रित करने वाले सिद्धान्त एक ही प्रकार के हैं। दोनों श्रेणीबद्ध असमानता को स्वीकार करते हैं और बुद्धि (विवेक) के बजाए जन्म के सिद्धान्त का समर्थन करते हैं।

अम्बेडकर का तर्क था कि सामुदायिक बंधनों को संचालित किए बिना और स्वतंत्रता तथा समानता को प्रोत्साहित किए बगैर जाति का उन्मूलन प्रायः असंभव हो जाता है। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए अंतरजातीय विवाह और अंतरभोज (साथ भोजन करना) का सुझाव दिया और माना कि अंतरभोज का कार्य इतना कमज़ोर है कि इससे स्थायी संबंध नहीं बन सकते। उनका यह भी तर्क था कि जो शास्त्र 'वर्णाश्रम धर्म' का समर्थन करते हैं उन्हें छोड़ देना चाहिए क्योंकि ये समाज के श्रेणीबद्ध संगठन (व्यवस्था) को उचित और वैध ठहराते हैं। उनका कहना था कि हिन्दू धर्म में पुरोहिती जन्म के बजाए प्रमाणित सक्षमता (certified competence) के आधार पर सभी सह-धर्मानुयायियों (co-religionists) के लिए खोल दी जाए। साथ ही, उनका मानना था कि इसका पालन करना प्रायः असंभव है क्योंकि जिसे छोड़ना होता है, उसके लिए धार्मिक रूप से आदेश देना जरूरी होता है।

12.3.5

अम्बेडकर ने छूआछूत (untouchability) को जाति से अलग माना हालाँकि छूआछूत पर भी जाति की तरह ही श्रेणीबद्ध असमानता के उसी सिद्धान्त की छाप है। छूआछूत न केवल जाति अपमान का चरम रूप है बल्कि गुणात्मक रूप से यह अलग रूप है क्योंकि इस व्यवस्था ने अछूतों को दायरे से बाहर रखा और सामाजिक अंतःसंपर्क को दूषित और शोचनीय बनाया। उनका तर्क था कि मतभेदों और अंतरों के बावजूद सभी अछूत एक जैसी असुविधा झेल रहे हैं और सवर्ण हिन्दू उनके साथ ठीक व्यवहार नहीं करते। उन्हें गाँव की सीमा के बाहर बस्तियों में रहने के लिए मज़बूर किया जाता है और उनका सर्वत्र तिरस्कार किया जाता है तथा उन्हें मानव संपर्क तथा मानव समाज से दूर रखा जाता है।

उन्होंने इस स्थिति को नहीं माना कि छूआछूत का आधार जाति (मूलवंश) में निहित है। ब्राह्मणवाद की विचारधारा से समर्थित सामाजिक संस्था माना। एक उदाहरण में छूआछूत की उत्पत्ति के कारणों की व्यापक रूप से जाँच ही नहीं की बल्कि उन्होंने एक अत्यंत कल्पनात्मक शोधप्रबंध भी प्रस्तुत किया कि अछूत टूटे हुए लोग हैं जो ग्रामीण समुदायों की सीमा के बाहर रहते हैं और जिन्होंने बौद्ध धर्म और गोमांस त्यागने से मना कर दिया है तथा उन्हें अछूत बना दिया गया है।

भारत में व्याप्त गहरे विश्वासों और छूआछूत की प्रथाओं के बारे में अम्बेडकर का विचार था कि इस बीमारी के लिए कोई समाधान नहीं ढूँढा जा सकता। छूआछूत को दूर करने के लिए पूरे समाज का परिवर्तन करना जरूरी है। दूसरे व्यक्ति के लिए सम्मान और अधिकार केवल संवैधानिक तंत्र के बजाए जीवन पद्धति होना चाहिए। छूआछूत के इर्द-गिर्द निहित स्वार्थों और पूर्वग्रहों (prejudices) के कारण,

स्थापित समूहों से ज्यादा कुछ आशा नहीं की जा सकती है। अतः उन्होंने महसूस किया कि स्वयं को मुक्त करने की प्राथमिक जिम्मेदारी स्वयं अछूतों की ही है। इस प्रकार की स्वसहायता के लिए न केवल संघर्षों की जरूरत है बल्कि इसके लिए शिक्षा और संगठन की भी आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त विभिन्न स्तरों पर प्राथमिकताओं के साथ संवैधानिक लोकतंत्र (constitutional democracy) भी इस प्रयास में बहुत सहायता कर सकता है।

12.3.6 संवैधानिक लोकतंत्र (Constitutional Democracy)

अम्बेडकर के कार्य का मुख्य क्षेत्र संवैधानिक लोकतंत्र पर था। वे विभिन्न संविधानों के विशेषज्ञ थे, विशेषकर उन संविधानों के जिन्होंने आन्दोलन की व्यापक अवधारणा को प्रस्तुत किया था। लोगों को एकता के बंधन में बाँधने के लिए और सामूहिक कार्यों में लोगों को समान सहभागिता (participation) प्रदान करने के लिए कानून (विधि) का शासन उनकी कल्पना के लिए अत्यंत अनिवार्य था। वह एक तरफ कानून और दूसरी तरफ रीति-रिवाजों तथा लोकप्रिय विश्वासों के बीच अंतःसंबंध के प्रति अत्यंत संवेदनशील थे। परन्तु उन्होंने महसूस किया कि रीति-रिवाज़ संकीर्ण हितों का समर्थन कर सकते हैं और लोकप्रिय विश्वास पूर्वग्रहों में गहराई से जकड़े जा सकते हैं तथा हो सकता है कि न्याय न हो सके। वे समय की माँग, नैतिकता और विवेक के अनुरूप न हों। यदि कानून स्वतंत्रता और लोकतंत्र पर कायम रहता है तो इसे सामान्य कल्याण के कार्य के लिए प्रयोग किया जा सकता है। सार्वजनिक संस्कृति में विस्तृत पूर्वग्रहों और न्याय की मनाही को ध्यान में रखते हुए उन्होंने सोचा कि कानून पर आधारित राज्य की भूमिका और लोकतांत्रिक जनादेश अत्यंत आवश्यक है। उन्होंने कानून द्वारा सूचित और ऐसे कानून जिनकी पहचान लोकतंत्र के प्रति संवेदनशीलता से हो, इस पर विचार किया। कानून में विवेक और नैतिकता होनी चाहिए परन्तु कानून के आधिकारिक निषेधादेश (authoritative injunctions) के बिना लोकतंत्र का कोई महत्व नहीं है।

लोकतंत्र और कानून पर अम्बेडकर ने जो बल दिया, उसने राज्य की स्वायत्तता (autonomy) पर भी बहुत जोर दिया। राज्य को समाज में व्याप्त संकीर्ण हितों को छोड़ने की जरूरत है जो प्रायः राज्य को अपने उद्देश्य के लिए एक अस्त्र में परिवर्तित कर देते हैं। उनका तर्क था कि बहुसंख्यक वर्ग जो स्थायी है और राजनीतिक विघटन और पुनर्गठन के लिए जिम्मेदार नहीं है, उन्हें भी संकीर्ण हित माना जा सकता है। वे अधिकारों को भी कमज़ोर कर सकते हैं परन्तु साथ ही उनका कहना था कि वे संवैधानिक लोकतंत्र को बनाए रखे हुए हैं।

12.4 सामाजिक न्याय और सहायक राज्यव्यवस्था (SOCIAL JUSTICE AND SUPPORTIVE POLITY)

अम्बेडकर भारत में पहले सिद्धान्तवादी (theoretician) थे जिन्होंने यह माना था कि यदि राज्य अधिकारों को कायम रखने के लिए प्रतिबद्ध है तो उसे चाहिए कि वह सुविधावंचितों के लिए राज्य के संवैधानिक आधार पर विचार करे। उन्होंने सुविधावंचित लोगों को निर्धारित करने के लिए एक जटिल मानदंड विकसित किया। छूआछूत एक बड़ी सामाजिक हानि है, हालाँकि यह अत्यंत अपमानजनक और तिरस्कारपूर्ण है। उन्होंने सामाजिक रूप से जन्म से उत्पन्न प्रतिकूल अवस्थाओं पर प्रकाश डाला क्योंकि वे प्राकृतिक और वंशागत प्रतिकूल अवस्थाओं से अनभिज्ञ थे परन्तु उन्होंने अनुभव किया कि सर्वाधिक प्रतिकूल अवस्थाएँ प्रभावशाली सामाजिक संबंधों से ही कायम हैं। ये सामाजिक संबंध स्वाभाविक प्रतिकूल दशाओं में बदलने का प्रयास करते हैं जो उनके ध्यान को रोकते हैं और समाज के बड़े भाग को उनके प्रति जिम्मेदारी से वंचित करते हैं। वे अपने पीछे सामान्य रूप से वंचित समूहों के लिए और विशेषरूप से अछूतों के लिए सुरक्षा उपाय (safeguards) की व्यवस्था छोड़ गए। उनका

मानना था कि सकारात्मक उपाय ही समाज के केवल नैतिक अंतःकरण (moral conscience) की अपेक्षा बेहतर गारंटी है हालाँकि नैतिक अंतःकरण ऐसे उपायों को बरकरार रखने के लिए पहली शर्त है।

सुरक्षा उपायों की योजना के संबंध में उन्होंने तीन प्रकार के उपाय बताए हालाँकि उन्होंने इन सभी तीन प्रकार के उपायों को सभी सुविधावंचित समूहों और ऐसी ही अन्य समूहों के लिए उपयुक्त नहीं माना। इन उपायों की उपयुक्तता पर कार्य संबंधित समूह की ठोस दशाओं के प्रत्युत्तर में किया जाना चाहिए। उन्होंने वंचित समूहों के लिए स्वायत्त राजनीतिक प्रतिनिधित्व (autonomous political representation) की माँग की ताकि उनकी न केवल राजनीतिक उपस्थिति सुनिश्चित हो सके बल्कि संबंधित समूह स्थिति के अनुसार स्वयं अपने विकास और परिरक्षण (preservation) के कार्य सुनिश्चित कर सके। उन्होंने इस उद्देश्य के लिए सार्वजनिक विवेक पर निर्भर रहने की अपेक्षा निश्चित संवैधानिक उपायों पर विचार किया। उनका मानना था कि इस प्रकार का प्रतिनिधित्व इन लोगों को बड़े और सामान्य मुद्दों का ध्यान रखने में सक्षम बनाएगा और तदनुसार लोग अपनी विशिष्ट आवश्यकताओं को बता सकेंगे। उन्होंने वंचित समूहों के लिए सार्वजनिक रोज़गार में आरक्षण की उस सीमा तक माँग की ताकि वे इस प्रकार के रोज़गार के लिए शर्तें पूरी कर सकें। उनका कहना था कि यदि इस प्रकार का समर्थन कानूनी रूप से उन्हें प्राप्त होता है तो वे बिल्कुल अलग-थलग पड़ जाएँगे। उन्होंने इन समूहों के लिए विस्तृत सहायक नीति उपायों की माँग की ताकि राज्य द्वारा शुरू किए जाने वाले विभिन्न विकासात्मक और कल्याणकारी उपायों के लाभ उन तक पहुँच सकें।

अम्बेडकर ने बहुसंख्यकों की सदिच्छा और कल्याण की अपेक्षा अधिकारों की अवधारणा पर आश्रित होने वाले विशेष उपायों पर जोर दिया। वास्तव में स्वयं सदिच्छा को विकसित किया जाना चाहिए और ऐसे अधिकारों की जानकारी होनी चाहिए। इस प्रकार के विकास के अभाव में, सदिच्छा और कल्याण प्रायः संकुचित हितों में परिवर्तित हो जाते हैं जो परोपकार की भाषा में स्वयं छला महसूस करते हैं।

12.5 सारांश

अम्बेडकर को एक नेता के रूप में चित्रित किया गया है जिन्होंने अछूतों के हित के लिए कार्य किया। वे वास्तव में देशभक्त थे और उन्होंने भारतीय समाज के सर्वाधिक सुविधावंचित वर्ग और निम्न वर्ग का समर्थन किया। परन्तु इस प्रकार का संरक्षण और समर्थन एक विचारधारा पर आधारित था। वे आलोचनात्मक रूप से अपने समय के संसार में विचारों और विचारधाराओं के साथ जुड़े थे और उनके संबंध में अपने मूल्यांकन तथा निर्णय तैयार किए। उन्होंने उनकी लोकप्रियता और श्रेष्ठता को बचाया। उन्होंने निजी क्षेत्र में और समाजों के नैतिक जीवन में धर्म को स्थान दिया परन्तु उनका विचार था कि यह स्थान अच्छे विवेक में निहित होना चाहिए। अधिकारों की मिश्रित अवधारणा और इस संसार का दावा सार्वजनिक जीवन की उनकी जानकारी के लिए महत्वपूर्ण था। वे लोकतंत्र के तीव्र समर्थक थे। परन्तु उनका कहना था कि लोकतंत्र को किसी शासन की व्यवस्था में नियंत्रित नहीं किया जा सकता है परन्तु इसे जीवन पद्धति बनने की आवश्यकता है। वे जाति व्यवस्था और छूआछूत के कट्टर आलोचक थे और उन्होंने इन्हें समाप्त करने का बहुत प्रयास किया। उन्होंने सामाजिक न्याय को अच्छी राज्यव्यवस्था की एक अनिवार्य विशेषता माना और उसके लिए ठोस उपाय सुझाए। उनके विचार उनके समकालीन चिंतकों से उन्हें अलग करते हैं और आज हम उनका सम्मान करते हैं तथा दूसरों से बहुत कुछ अलग होने के कारण वे हमारे लिए अत्यंत प्रासंगिक हैं।

12.6 अभ्यास प्रश्न

1) उदारवाद की अम्बेडकर की आलोचना पर टिप्पणी कीजिए।

2) मार्क्स के साथ अम्बेडकर के महत्वपूर्ण मतभेद कौन-कौन से थे?

3) एक विचारधारा के रूप में ब्राह्मणवाद की विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

4) गांधी और अम्बेडकर के बीच द्वंद्व (conflict) के चार मुद्दों के बारे में बताइए।

5) अम्बेडकर के चिंतन में विवेक के महत्व पर चर्चा कीजिए।

6) अम्बेडकर के चिंतन में अधिकारों की अवधारणा पर प्रकाश डालिए।

7) हिन्दू धर्म पर अम्बेडकर की जानकारी की समीक्षा कीजिए।

8) अम्बेडकर बौद्ध धर्म को आधुनिक विश्व के लिए उपयुक्त क्यों मानते हैं?

9) ईसाई धर्म और इस्लाम की अम्बेडकर की आलोचना के बारे में आप क्या सोचते हैं?

10) अम्बेडकर के अनुसार छूआछूत की प्रमुख विशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

11) अम्बेडकर क्यों सोचते हैं कि छूआछूत के विरुद्ध संघर्ष अनेक मोर्चों से शुरू किया जाना चाहिए?

12) अम्बेडकर की संवैधानिक लोकतंत्र की रक्षा के कारणों पर प्रकाश डालिए।

13) अम्बेडकर क्यों सोचते हैं कि बहुसंख्यक वर्ग संवैधानिक लोकतंत्र का शिकार हो सकते हैं?

14) वंचितों के लिए विशेष व्यवहार करने के लिए अम्बेडकर के तर्कों का उल्लेख कीजिए।

15) अम्बेडकर द्वारा सुझाए गए विशेष व्यवहार की योजना पर प्रकाश डालिए। अपने अध्ययन और अनुभव से इनमें से किसी एक योजना का मूल्यांकन कीजिए।

16) अम्बेडकर क्यों सोचते हैं कि जाति व्यवस्था समानता की माँगों में बाधक है?

17) "हिन्दू धर्म और जाति व्यवस्था एक-दूसरे से पृथक् नहीं हो सकते" क्या आप इससे सहमत हैं?